श्रावक प्रतिक्रमण में श्रमण सूत्र का सन्निवेश?

श्री मदनलाल कटारिया

श्रावक प्रतिक्रमण में श्रमणसूत्र के शय्यासूत्र आदि पाँच पाठों को बोलने को लेकर स्थानकवासी सम्प्रदाय में मतभेद है। मन्दिरमार्गी एवं तेरापंथ सम्प्रदाय तो श्रावक प्रतिक्रमण में इन पाठों को नहीं बोलते हैं, किन्तु स्थानकवासियों में जो श्रावक बोलते हैं, तथा इसका जो हेतु देते हैं, उस हेतु का निराकरण इन प्रश्नोत्तरों में भलीभाँति हुआ है। *-सम्पादक*

प्रश्न क्या श्रावक प्रतिक्रमण में श्रमण सूत्र बोल सकता है?

उत्तर नहीं।

प्रश्न इसका क्या कारण है?

उत्तर श्रमण का अर्थ साधु होता है, श्रावक नहीं। अतः श्रमण सूत्र साधु को ही बोलना चाहिए, श्रावक को नहीं।

प्रश्न श्रमण का अर्थ साधु ही होता है, श्रावक नहीं, यह कैसे कहा जा सकता है?

उत्तर शास्त्रों के अनेक प्रमाणों से यह सिद्ध है कि श्रमण का अर्थ साधु ही होता है। देखिए, आगमों के वे प्रमाण आगे दिखलाए जा रहे हैं-

दशवैकालिक सूत्र के प्रमाण- १. समणा (अ.१ गा.३) २. सामण्णं (अ.२ गा.१) ३. समणेणं (अ.४) ४. सामण्णं (अ.४गा.२६) ५. सामण्णम्मि (अ.५उ.१गा.१०) ६. समणट्ठाए (अ.५ उ.१ गा.३०व४०) ७.सामण्णं (अ.५उ.२गा.३०) ८. समणा (अ.५उ.३गा.३४) ९. समणे (अ.५ उ.२गा.४०) १०. सामणिए (अ.१० गा.१४) ११. सामण्णे (प्रथम चूलिका गा. ६)।

उत्तराध्ययन सूत्र के प्रमाण-१. सामण्णं (अ.२ गा.१६) २. समणं (अ.२ गा.२७) ३. सामण्णं (अ.२ गा.३३) ४. समणं (अ.४ गा.११) ५. समणा (अ.८ गा.७) ६. समणा (अ. ८ गा.१३) ७. सामण्णे (अ.९ गा.६१) ८. समणो (अ.१२ गा.९) ९. समणा (अ.१४गा.१७) १०. पावसमणे (अ.१७) ११. सामण्णे (अ.१९गा.४७) १२. समण (अ.१९गा.५) १३. सामण्णं (अ.१९गा.९) १४. सामण्णं (अ.१९गा.२५) १५. सामण्णं (अ.१९ गा.३५) १६.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समणत्तणं (अ.१६गा.४०,४१,४२) १७. सामण्णे (अ.१६गा.७६) १८. सामण्णे (अ.२०गा.८) १६. सामण्णस्स (अ.२२गा.४६) २०. सामण्णं (अ.२२गा.४६) २१. केसी कुमार समणे (अ. २३) २२. समणो (अ.२५गा.३१) २३. समणो (अ.२५गा.३२) २४.समणेणं (अ.२६सूत्र.७४) २५. समणे (अ.३२गा.४) २६. समणे (अ.३२गा.१४ व २१)। समणे(अ.३२ गा.१४ व २१)।

नंदी सूत्र का प्रमाण- १. समण गण सहस्स पत्तस्स (गाथा ८)।

अनुयोगद्वारसूत्र के प्रमाण- १. समणे वा समणी वा (सूत्र २७)।

समणो (सामायिक प्रकरण)- यहाँ बत्तीस आगमों में से चार आगमों के ही प्रमाण दिए गए हैं। शेष आगमों में आए प्रमाणों का उल्लेख करें तो काफी विस्तार हो सकता है। अतः अति विस्तार नहीं किया गया है। सभी जगह श्रमण का अर्थ 'साधु' तथा श्रामण्य का अर्थ 'साधुत्व' लिया गया है। इन प्रमाणों से यह बात सर्वथा सिद्ध है कि श्रमण का अर्थ साधु ही होता है। आगमों में कहीं भी श्रमणोपासक को श्रमण कहकर नहीं पुकारा गया है।

प्रश्न आपने अनेक प्रमाण दिए, किन्तु भगवतीसूत्र में श्रावक को भी श्रमण कहा गया है। भगवतीसूत्र के २१,२० उ.८ में कहा गया है- "तित्थं पुण चाउवण्णाइण्णे समणसंघे पण्णत्ते तंजहा- समणा, समणीओ, सावया, साावियाओ। यहाँ श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका चारों को श्रमण संघ के अन्तर्गत लिया गया है, जिससे मालूम पड़ता है कि श्रावक को भी श्रमण कहा गया है।

उत्तर भगवतीसूत्र के इस पाठ में श्रावक को श्रमण नहीं कहा गया है। यहाँ 'समणसंघे' का अर्थ है श्रमण प्रधान संघ। श्रमण प्रधान संघ को यहाँ तीर्थ कहा गया है तथा उसी श्रमण प्रधान संघ के अन्तर्गत साधु, साध्वी, श्रावक एवं श्राविकाओं को ग्रहण किया गया है। श्रमण प्रधान संघ का तात्पर्य है जिसमें श्रमण प्रधान हो एसा संघ। चतुर्विध संघ में साधु महाव्रती होने के कारण प्रधान होते हैं एवं श्रावक अणुव्रती होने से उनकी अपेक्षा अप्रधान होते हैं, यह बात विज्ञजनों से छिपी हुई नहीं है। अतः भगवतीसूत्र के इस पाठ के आधार से भी श्रावक को श्रमण कहना अनुपयुक्त है।

प्रश्न 'समणसंघे' का अर्थ श्रमण प्रधान संघ कैसे होता है?

उत्तर 'समणसंघे' यह पद एक समासयुक्त पद है। व्याकरण के अनुसार समासयुक्त पद का अर्थ विग्रह के माध्यम से किया जाता है। 'समणसंघे' यह मध्यम पद लोपी कर्मधारय समास से बना हुआ शब्द है। इसका विग्रह इस तरह होगा- श्रमण प्रधानः संघः श्रमणसंघः। जिस प्रकार 'शाकप्रिय पार्थिवः' में मध्यम पद 'प्रिय' का लोप होकर ' शाक पार्थिवः' शब्द बनता है, उसी प्रकार यहाँ भी 'श्रमण प्रधानः संघः में मध्यम पद 'प्रधान' का लोप होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'श्रमणसंघः' शब्द बनता है।

प्रश्न क्या किसी अन्य व्याख्याकार ने भी यह अर्थ किया है?

उत्तर हाँ! बेचरदासजी कृत भगवतीसूत्र के भाषानुवाद में भी 'समणसंघे' का अर्थ श्रमण प्रधान संघ किया गया है। पारम्परिक दृष्टिकोण से देखें तो भी प्रतिक्रमण के अन्तर्गत आने वाले 'बड़ी संलेखना के पाठ' में भी 'साधु प्रमुख चारों तीर्थों' यही अर्थ प्राप्त होता है। इस आधार से भी श्रमण-प्रधान संघ यही अर्थ फलित होता है।

प्रश्न माना कि सामान्यतः श्रावक के लिए श्रमण शब्द का प्रयोग आगम विरुद्ध है, किन्तु जब वह श्रावक सामायिक आदि धर्म क्रियाएँ कर रहा हो, उस समय उसे श्रमण कहने में क्या हर्ज है?

उत्तर सामायिक करते हुए श्रावक को भी श्रमण कहना आगमानुकूल नहीं है। श्री भगवतीसूत्र के आठवें शतक के पाँचवें उद्देशक में-

"समणोवासयस्स णं भंते! सामाइयकडस्स"

इस सूत्र के द्वारा सामायिक किए हुए श्रावक को भी श्रमणोपासक ही कहा गया है और तो और दशाश्रुतस्कंधसूत्र की छठी दशा में श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का वर्णन आया है। उनमें से सर्वोच्च ग्यारहवीं प्रतिमा के धारक को कोई पूछे कि-

"केइ आउसो! तुमं वत्तव्वं सिया"

"हे आयुष्मन् तुम्हें क्या कहना चाहिए"

तो इस प्रकार पूछे जाने पर वह उत्तर दे कि-

"समणोवासए पडिमापडिवण्णए अहमंसीति"

"मैं प्रतिमाधारी श्रमणोपासक हूँ"

जब सर्वोच्च प्रतिमा का धारक श्रावक भी श्रमणोपासक यानी श्रमणों का उपासक है, श्रमण नहीं तो फिर अन्य कोई भी श्रावक श्रमण कैसे कहला सकता है? स्पष्ट है कि किसी भी श्रावक को श्रमण नहीं कहा जा सकता ।

प्रश्न यदि श्रमण का अर्थ श्रावक न भी हो तो भी श्रावक को प्रतिक्रमण करते समय श्रमण सूत्र पढ़ने में क्या हर्ज है?

उत्तर श्रमण सूत्र के अन्तर्गत आने वाली अनेक पाटियाँ ऐसी हैं।, जो श्रावक द्वारा प्रतिक्रमण में उच्चरित करने योग्य नहीं है। श्रमण सूत्र की पाँचवीं पाटी में कहा गया है-

'समणोहं संजय-विरय-पडिहय-पच्चक्खाय-पावकम्मे'

अर्थात् "मैं श्रमण हूँ, संयत हूँ, पाप कर्मों को प्रतिहत करने वाला हूँ तथा पाप

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्मों का प्रत्याख्यानी हूँ।

प्रतिज्ञा सूत्र में श्रावक स्वयं को श्रमण कहे तो वह दोष का भागी है। दशाश्रुतस्कंध की छठी दशा के प्रमाण से यह पहले ही बतलाया जा चुका है कि ग्यारहवीं प्रतिमा की आराधना करने वाला श्रावक भी स्वयं को श्रमणोपासक कहता है, श्रमण नहीं कहता। अतः सावद्य योगों का दो करण तीन योगों से त्याग करने वाले सामायिक में स्थित श्रावक के द्वारा स्वयं को श्रमण कहना मृषावाद की कोटि में प्रविष्ट होता है।

प्रश्न तैंतीस बोलों में से अनेक बोल श्रावक के लिए यथायोग्य रूप से हेय, ज्ञेय अथवा उपादेय हैं। अतः तैंतीस बोल की पाटी का उच्चारण श्रावक प्रतिक्रमण में किया जाए तो क्या बाधा है?

उत्तर यद्यपि तैंतीस बोलों में से कुछ बोलों का सम्बन्ध श्रावक के साथ भी जुड़ा हुआ है फिर भी आगमों से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि तैंतीस बोलों का सामूहिक कथन साधुओं के लिए ही किया गया है। देखिए स्थानांगसूत्र का नवां स्थान जिसमें भगवान् महावीर अपनी तुलना आगामी उत्सर्पिणी काल में होने वाले प्रथम तीर्थंकर महापद्म से करते हुए फरमाते हैं कि जैसे मैंने श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए पहले से लेकर तैंतीसवें बोल तक तैंतीस बोलों का कथन किया है, उसी प्रकार महापद्म तीर्थंकर भी श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए एक से लेकर तैंतीस बोलों तक का कथन करेंगें। वह पाठ इस प्रकार है-

"मए समणाणं निग्गंथाणं एगे आरंभठाणे पण्णत्ते एवामेव महापउमे वि अरहा समणाणं निग्गंथाणं एगं आरंभठाणं पण्णवेहिइ, से जहाणामए अज्जो! मए समणाणं निग्गंथाणं दुविहे बंधणे पण्णत्ते तंजहा-पेज्जबंधणे, दोसबंधणे, एवामेव महापउमे वि अरहा समणा णिग्गंथाणं दुविहं बंधणं पण्णवेहिइ तंजहा-पेज्जबंधणं च दोसबंधणं च। से जहाणामए अज्जो! मए समणाणं निग्गंथाणं तओ दंडा पण्णत्ता तं जहा मणदंडे वयदंडे कायदंडे एवामेव महापउमे वि समणाणं निग्गंथाणं तओ दंडे पण्णवेहिइ तंजहा मणोदंडं वयदंडं कायदंड से जहाणामए एएणं अभिलावेणं चत्तारि कसाया पण्णत्ता तं जहा कोहकसाए माणकसाए मायाकसाए लोहकसाए पंच कामगुणे पण्णत्ते तंजहा सद्दे रूवे गंधे रसे फासे छज्जीवणिकाय पण्णत्ता तंजहा पुढविकाइया जाव तसकाइया एवामेव जाव तसकाइया से जहाणामए एएणं अभिलावेणं सत्त भयट्ठाणा पण्णत्ता तं एवामेव महापउमे वि अरहा समणाणं निग्गंथाणं सत्त भयट्ठाणा पण्णवेहिइ एवमट्ठमयट्ठाणे, णव बंभचेरगुत्तीओ, दसविहे समणधम्मे एगारस उवासगपडिमाओ एवं जाव तेत्तीसमासायणाउत्ति।"

अर्थ- आर्यों! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए एक आरंभ-स्थान का निरूपण किया है, उसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण निर्ग्रन्थों के लिए एक आरम्भ-स्थान का निरूपण करेंगे।

आर्यों! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए दो प्रकार के बन्धनों का निरूपण किया है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैसे- प्रेयोबन्धन और द्वेषबन्धन। इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए दो प्रकार के बन्धन कहेंगे। जैसे-प्रेयोबन्धन और द्वेष बन्धन।

आर्यों! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए तीन प्रकार के दण्डों का निरूपण किया है, जैसे-मनोदण्ड, वचनदण्ड और कायदण्ड। इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए तीन प्रकार के दण्डों का निरूपण करेंगे। जैसे- मनोदण्ड, वचनदण्ड और कायदण्ड।

आर्यों ! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए चार कषायों का निरूपण किया है, यथा- क्रोध-कषाय, मान-कषाय, माया-कषाय और लोभ-कषाय। इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए चार प्रकार के लिए कषायों का निरूपण करेंगे। जैसे- क्रोध-कषाय, मान-कषाय, माया-कषाय और लोभ-कषाय।

आर्यों! जैसे मैनें श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए पाँच कामगुणों का निरूपण किया है, जैसे - शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श । इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए पाँच कामगुणों का निरूपण करेंगे। जैसे- शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श।

आर्यों! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए छह जीवनिकायों का निरूपण किया है। यथा- पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक , वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक। इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए छह जीवनिकायों का निरूपण करेंगे। यथा-पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पति-कायिक और त्रसकायिक।

आर्यों! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए सात भय स्थानों का निरूपण किया है, जैसे- इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्माद्भय, वेदनाभय, मरणभय और अश्लोकभय। इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए सात भयस्थानों का निरूपण करेंगे। यथा- इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्माद्भय, वेदनाभय, मरणभय और अश्लोकभय।

आर्यों ! जैसे मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए आठ मदस्थानों का, नौ ब्रह्मचर्य गुप्तियों का,दश प्रकार के श्रमण-धर्मों का , ग्यारह उपासक प्रतिमाओं का यावत् तैंतीस आशातनाओं का निरूपण करेंगें।

प्रश्न यहाँ ग्यारह उपासक प्रतिमाओं का कथन भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए किया गया है, जबकि इन प्रतिमाओं का पालन श्रावक ही कर सकता है, इसे कैसे समझा जाय?

उत्तर उपासक प्रतिमाओं की पालना श्रावक ही करता है किन्तु श्रमण-निर्ग्रन्थों को इन प्रतिमाओं का उपदेश दिया गया है, उसका कारण यह है कि तैंतीस बोलों का सामूहिक तौर से कथन साधुओं के लिए किया गया है। इन तैंतीस बोलों के अन्तर्गत होने से उपासक प्रतिमाओं का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कथन भी साधुओं के लिए हो गया है। इसका तात्पर्य यह है कि साधु इन उपासक प्रतिमाओं की श्रद्धा-प्ररूपणा शुद्ध रूप से करे।

प्रश्न क्या इस कथन से ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि यहाँ शास्त्रकारों को श्रमण निर्ग्रन्थ का अर्थ 'श्रावक' करना अभीष्ट है?

उत्तर नहीं । इसी पाठ के आगे के सूत्रों को देखने से स्पष्ट ज्ञात होता है कि श्रमण निर्ग्रन्थ का अर्थ साधु ही होता है, श्रावक नहीं। देखिए वे सूत्र इस प्रकार हैं-

से जहाणामए अज्जो! मए समणाणं निग्गंथाणं पंचमहव्वइए सपडिक्कमणे अचेलए धम्मे पण्णत्ते एवामेव महापउमेवि अरह समणाणं निग्गंथाणं पंचमहव्वइयं जाव अचेलयं धम्मं पण्णवेहिइ। से जहाणामए अज्जो! मए पंचाणुव्वइए सत्तसिक्खावइए दुवालसविहे सावगधम्मे पण्णत्ते एवामेव महापउमेवि अरहा पंचाणुव्वइयं जाव सावगधम्मं पण्णवेस्सइ।

अर्थ- आर्यों! मैंने श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए जैसे- प्रतिक्रमण और अचेलतायुक्त पाँच महाव्रत रूप धर्म का निरूपण किया है, इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए प्रतिक्रमण और अचेलतायुक्त पाँच महाव्रत रूप धर्म का निरूपण करेंगे।

आर्यों! मैंने जैसे पाँच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार के श्रावक धर्म का निरूपण किया है, इसी प्रकार अर्हत् महापद्म भी पाँच अणुव्रत और सात शिक्षाव्रत रूप बारह प्रकार के श्रावक धर्म का निरूपण करेंगे।

यहाँ पाँच महाव्रतों का कथन करते समय 'समणाणं निग्गंथाणं' इन शब्दों का प्रयोग किया गया है किन्तु पाँच अणुव्रत आदि बारह प्रकार के श्रावक धर्मों का कथन करते समय 'समणाणं निग्गंथाणं' इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। यदि श्रमण निर्ग्रन्थ का अर्थ श्रावक करना शास्त्रकारों को इष्ट होता तो शास्त्रकार पाँच अणुव्रतों का कथन करते समय भी 'समणाणं निग्गंथाणं' इन पदों का प्रयोग करते, किन्तु आगमकारों ने ऐसा नहीं किया जिससे स्पष्ट है कि श्रमण निर्ग्रन्थ का अर्थ साधु ही होता है, श्रावक नहीं।

प्रश्न क्या किसी अन्य आगम में भी तैंतीस बोलों का सामूहिक कथन मुनियों के लिए किया गया है?

उत्तर हाँ, उत्तराध्ययनसूत्र के इकतीसवें 'चरणविधि' नामक अध्ययन में भी इन तैंतीस बोलों का कथन है। वहाँ भी इन सभी बोलों को भिक्षु अर्थात् साधु के साथ सम्बन्धित किया गया है।

प्रश्न यह तो समझ में आया, किन्तु श्रमण सूत्र की तीसरी पाटी "पडिक्कमामि चाउक्कालं सज्झायस्स अकरणयाए उभयोकालं भण्डोवगरणस्स अप्पडिलेहणाए दुप्पडिलेहणाए....." का उच्चारण श्रावक प्रतिक्रमण में क्यों नहीं किया जा सकता?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर उस पाटी का उच्चारण भी श्रावक प्रतिक्रमण में होना उपयुक्त नहीं है। यह पाटी उभयकाल नियमपूर्वक वस्त्र-पात्रादि की प्रतिलेखना करने वाले मुनियों के प्रतिलेखन सम्बन्धी दोषों की विशुद्धि के लिए है। साधारणतया कोई श्रावक ऐसा नहीं होता कि अपने सभी वस्त्रों, बर्तनों, उपधियों की प्रतिलेखना करे। यदि श्रावक अपनी सभी वस्तुओं की प्रतिलेखना करे तो शायद सुबह से शाम तक प्रतिलेखना ही करता रहे। उभयकाल नित्य प्रति प्रतिलेखना का विधान भी मुनियों के लिए किया गया है तथा उसका प्रायश्चित्त विधान भी निशीथ सूत्र में किया गया है। यथा- *'जे भिक्खू इतरियं पि उवहिं ण पडिलेहइ ण पडिलेहंतं वा साइज्जइ'*

जो भिक्षु थोड़ी सी भी उपधि की प्रतिलेखना नहीं करता है या नहीं करने वाले का अनुमोदन करता है, वह प्रायश्चित का भागी है।

चूंकि प्रतिलेखना का नित्य विधान मुनियों के लिए ही है। अतः इस पाटी का उच्चारण भी मुनियों को ही करना चाहिए, श्रावकों को नहीं।

प्रश्न पौषध व्रत में श्रावक भी प्रतिलेखन करता है, अतः श्रावक भी यह पाटी क्यों न बोले?

उत्तर पौषध व्रत श्रावक नित्य प्रति नहीं करता है। अतः श्रावक प्रतिक्रमण में इसके उच्चारण की आवश्यकता नहीं रहती है। साथ ही यह भी समझने योग्य है कि पौषध व्रत में लगे प्रतिलेखन सम्बन्धी दोषों की विशुद्धि पौषध व्रत के अतिचार शुद्धि के पाठ से हो जाती है। वहाँ बतलाया गया है- *"अप्पडिलेहिय दुप्पडिलेहिय सेज्जासंथारए, अप्पमज्जिय दुप्पमज्जिय सेज्जासंथारए"* यानी "शय्या संस्तारक की प्रतिलेखना न की हो या अच्छी तरह से न की हो, पूंजा न हो या अच्छी तरह से न पूँजा हो।.....तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

अतः पौषध व्रत में की जाने वाली प्रतिलेखना के दोषों की शुद्धि के लिए श्रमण सूत्र की इस पाटी के उच्चारण की कोई आवश्यकता नहीं है।

प्रश्न जैसे पौषध व्रत नित्य प्रति नहीं किया जाता , फिर भी उसके अतिचारों की शुद्धि का पाठ श्रावक प्रतिक्रमण में है, वैसे ही प्रतिलेखन नित्य प्रति नहीं किया जाने पर भी उसके दोषों की शुद्धि का पाठ श्रावक प्रतिक्रमण में क्यों नहीं हो सकता?

उत्तर श्रावक प्रतिक्रमण की विधि का सूक्ष्म निरीक्षण करने से ज्ञात होता है कि जो पाटियाँ श्रावक के नित्यक्रम से जुड़ी हुई हैं यानी जो व्रत जीवनपर्यन्त के लिए हैं, उनकी शैली में तथा कभी-कभी पालन किये जाने वाले व्रतों की शैली में कुछ फर्क है। श्रावक के प्रथम आठ व्रत जीवनपर्यन्त के लिए होते हैं तथा अन्तिम चार व्रत कभी-कभी अवसर आने पर आराधित किए जाते हैं। कभी-कभी पालन किये जाने वाले पौषध आदि व्रतों में प्रायः इस प्रकार की शब्दावली का प्रयोग किया गया है कि "ऐसी मेरी सद्दहणा प्ररूपणा तो है पौषध का अवसर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आए, पौषध करूँ, तब फरसना करके शुद्ध होऊँ"।

पौषध व्रत के अतिचार शुद्धि के प्रकरण में तो उपर्युक्त प्रकार का पाठ है, जबकि प्रतिलेखना-दोष-निवृत्ति तथा निद्रा-दोष-निवृत्ति आदि श्रमण सूत्र की पाटियों में ऐसा पाठ नहीं है कि 'ऐसी मेरी सद्दहणा प्ररूपणा तो है....आदि'।' इससे यह स्पष्ट है कि ये पाटियाँ साधुओं के लिए ही हैं क्योंकि ये मुनियों के नित्यक्रम से ही जुड़ी हुई हैं, श्रावकों के नहीं। यदि ये पाटियाँ श्रावकों के लिए होती तो इनमें भी 'ऐसी मेरी सद्दहणा प्ररूपणा तो हैं.... " ऐसा पाठ होता, किन्तु ऐसा पाठ नहीं है। इसका तात्पर्य यह है कि ये पाटियाँ श्रावक प्रतिक्रमण में नहीं होनी चाहिए।

प्रश्न निद्रा तो सभी श्रावक लेते हैं फिर 'निद्रा दोष निवृत्ति' का पाठ श्रावक प्रतिक्रमण में क्यों न हो?

उत्तर निद्रा-दोष-निवृत्ति के पाठ की शब्दावली ही यह बतला देती है कि यह पाठ साधु जीवन का है, श्रावक का नहीं। इस पाठ में अधिक देर तक सोने का, मोटे आसन पर सोने का, छींक जंभाई से होने वाले दोष का, स्त्री विपर्यास का, आहार पानी सम्बन्धी विपर्यास आदि दोषों का प्रतिक्रमण होता है। श्रावक के लिए सोने के समय का कोई नियम शास्त्रकारों ने नहीं फरमाया, किन्तु साधु के लिए निश्चित समय बताया है। श्रावक डनलप के गद्दे पर भी सोता है, पर मुनि सामान्य पतले आसन का ही उपयोग करते हैं। श्रावक दिन रात खुले मुँह बोलता है किन्तु मुनि मुखवस्त्रिका का उपयोग करते हैं। अतः रात्रि में छींक जंभाई आदि के अवसर पर अनुपयोग से मुखवस्त्रिका ऊँची नीची हो जाए तो खुले मुँह से वायु निकलने से हिंसा का दोष लग सकता है। श्रावक के लिये स्त्री को पास में रखकर शयन करने का निषेध नहीं है, किन्तु साधु तीन करण तीन योग से ब्रह्मचर्य का आराधक होता है। अतः स्वप्न में भी यदि स्त्री सम्बन्धी विपर्यास हो तो उसे दोष लग सकता है। अनेक श्रावक रात्रि को आहार करते हैं, किन्तु मुनि रात्रि भोजन के सर्वथा त्यागी होते हैं। अतः स्वप्न में भी आहार ग्रहण कर ले तो रात्रिभोजन सम्बन्धी दोष लग सकता है।

निद्रा संबंधी उपर्युक्त अनेक दोष साधु के लगते हैं। अतः यह पाठ साधु प्रतिक्रमण में ही होना चाहिए, श्रावक प्रतिक्रमण में नहीं।

प्रश्न श्रावक भी पौषध आदि अवसरों पर उपर्युक्त अनेक नियमों का पालन करते हैं। अतः श्रावक प्रतिक्रमण में यह पाटी रहे तो क्या अनुचित है?

उत्तर पहले बताया जा चुका है कि कभी-कभी आराधित किए जाने वाले व्रतों की शैली में "ऐसी मेरी सद्दहणा प्ररूपणा तो है, अवसर आए तब फरसना करके शुद्ध होऊँ।" आदि शब्दावली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का प्रयोग हुआ करता है। इस पाटी में ऐसा प्रयोग न होने से स्पष्ट है कि यह पाठ साधु प्रतिक्रमण के ही योग्य है।

प्रश्न तो फिर पौषध में निद्रा संबंधी दोषों की शुद्धि किससे होगी?

उत्तर पौषधव्रत के पाँच अतिचारों में पाँचवां अतिचार है "पोसहस्स सम्मं अणणुपालणया" "उपवासयुक्त पौषध का सम्यक् प्रकार से पालन नहीं किया हो"। ग्यारहवें व्रत की पाटी बोलने से पाँच अतिचारों का शुद्धीकरण होता है, जिसमें पाँचवें अतिचार "सम्यक् प्रकार से पौषध का पालन न करने" के अन्तर्गत निद्रा दोष आदि समग्र पौषध सम्बन्धी दोषों का शुद्धीकरण हो जाता है।

उससे तो सामान्य शुद्धीकरण होता है, विशेष शुद्धीकरण के लिए अलग से पाटी होनी चाहिए?

यदि एक-एक दोष के शुद्धीकरण के लिए अलग-अलग पाटियों की जरूरत रहेगी तो श्रावक प्रतिक्रमण में पहली, दूसरी, चौथी, पाँचवीं समिति, तीन गुप्ति, रात्रि भोजन त्याग आदि सम्बन्धी अनेक पाटियाँ जो साधु प्रतिक्रमण में है, उन्हें भी श्रावक प्रतिक्रमण में डालना पड़ेगा, क्योंकि पौषध में श्रावक भी अपने स्तर से यथायोग्य इन बातों की पालना करता ही है। किन्तु ऐसा होना संभव नहीं है। अतः हर दोष के लिए अलग से पाठ की परिकल्पना करना योग्य नहीं है।

प्रश्न आवश्यक सूत्र में ये सभी पाटियाँ है। श्रावक भी आवश्यक करता ही है अतः श्रावक अपने प्रतिक्रमण में क्यों नहीं कहे?

आवश्यक सूत्र में वर्तमान काल में उपलब्ध पाठ साधु-जीवन से सम्बन्धित हैं। यदि आवश्यक सूत्र में होने मात्र से इन पाठों को श्रावक प्रतिक्रमण में ग्रहण किया जायेगा तो श्रावक को भी 'करेमि भंते' में तीन करण तीन योग से सावद्य योगों का त्याग करना होगा, क्योंकि आवश्यक सूत्र में करेमि भंते का जो पाठ है, उसमें 'तिविहं तिविहेणं' का ही उल्लेख है।

आवश्यक सूत्र में आए हुए 'इच्छामि ठामि' के पाठ में भी *"तिण्हं गुत्तीणं चउण्हं कसायाणं पंचण्हं महव्वयाणं छण्हं जीवणिकायाणं सत्तण्हं पिंडेसणाणं अट्ठण्हं पवयणमाऊणं णवण्हं बंभचेरगुत्तीणं दसविहे समणधम्मे समणाण जोगाणं"* आदि रूप शब्दावली है। इसमें तीन गुप्तियाँ, पाँच महाव्रत, सात पिण्डैषणाएँ, आठ प्रवचन माताएँ, नौ ब्रह्मचर्य की गुप्तियाँ आदि साधु-जीवन सम्बन्धी पाठ हैं। आवश्यक सूत्र में होने पर भी श्रावक इन पाठों का उच्चारण नहीं करके इनके स्थान पर श्रावक योग्य पाठ बोलता है, यथा-

"तिण्हं गुणव्वयाणं, चउण्हं सिक्खावयाणं पंचण्हमणुव्वयाणं बारसविहस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सावग्गधम्मस्स" का उच्चारण करता है। अतः आवश्यक सूत्र में है, ऐसा कहकर साधु प्रतिक्रमण के पाठों को श्रावक प्रतिक्रमण में डाल देना कतई योग्य नहीं है।

प्रश्न श्रमणसूत्र को श्रावक प्रतिक्रमण में बोलना सही मानना पड़ेगा क्योंकि किसी-किसी सम्प्रदाय में यह पाठ उच्चरित किया जाता रहा है।

उत्तर यह पाठ बोलना कब से शुरू हुआ इसका इतिहास तो ज्ञात नहीं है। प्राप्त प्रमाणों से इतना अवश्य कहा जा सकता है कि प्राचीनकाल में यह परम्परा नहीं थी। प्रवचनसारोद्धार की गाथा ७५ की टीका करते हुए कहा है कि-

"सुत्तं तं सामायिकादिसूत्रं भणति साधुः स्वकीयं श्रावकस्तु स्वकीयम्" इसमें स्पष्ट बताया है कि साधु अपना सूत्र यानी श्रमण सूत्र कहे तथा श्रावक अपना सूत्र यानी श्रावक सूत्र कहे। यदि साधु एवं श्रावक को एक ही पाठ बोलना होता तो दोनों अपना-अपना सूत्र बोलें ऐसा कथन क्यों होता?

क्रान्तिकारी आचार्य धर्मसिंहजी म.सा., जो कि दरियापुरी सम्प्रदाय के पूर्व पुरुष रहे हैं, ने भी श्रमण सूत्र का श्रावक प्रतिक्रमण में होना अनुचित बतलाया है। उनके वाक्य इस प्रकार हैं-

"श्रावक ना प्रतिक्रमण मां श्रमण सूत्र बोलवा नी जरूरत नथी कारण के श्रमण सूत्र साधुओं माटे छे। अने श्रावक ने प्रत्याख्यान (नवकोटिए) नथी तेनुं प्रतिक्रमण करवानुं होय नहि"

किसी-किसी सम्प्रदाय द्वारा किए जाने मात्र से यदि श्रमण सूत्र को श्रावक प्रतिक्रमण में कहना वैधानिक मान लिया जाए तो माइक आदि विद्युतीय साधनों के प्रयोग को भी वैधानिक मानना पड़ सकता है, क्योंकि वह भी कुछेक सम्प्रदायों द्वारा आचरित है।

आगमिक आधारों को प्रमुखता देने वाला साधुवर्ग एवं श्रावक वर्ग किसी भी परम्परा को तभी महत्त्व दे सकता है, जब वह आगम से अविरुद्ध हो। श्रावक प्रतिक्रमण में श्रमण सूत्र बोलना ऊपर बतलाये गए अनेक कारणों से आगमसंगत नहीं लगता। अतः किसी समय में किन्हीं के द्वारा श्रमणसूत्र को श्रावक प्रतिक्रमण में जोड़ कर परम्परा चला दी गई हो तथा किन्हीं ने अनुकरणशीलता की वृत्ति के अनुरूप उस परम्परा का अनुकरण कर भी लिया हो तो आगमिक आशय को स्पष्टतया जान लेने के पश्चात् उसे यथार्थ को स्वीकारते हुए श्रमण सूत्र को श्रावक प्रतिक्रमण से हटा देना चाहिए।

यदि परम्परा को ही सत्य माना जाय तो किसकी परम्परा को सत्य माना जाय। अनेक परम्पराओं के श्रावक बिना श्रमण सूत्र का प्रतिक्रमण करते हैं यथा- पंजाब के पूज्य अमरसिंहजी म.सा. की पंजाबी संतों की परम्परा, रत्नवंश की परम्परा, पूज्य जयमलजी म.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सा. की परम्परा, नानक वंश की परम्परा, मेवाड़ी पूज्य अम्बालाल जी म.सा. की परम्परा, उपाध्याय पुष्करमुनि जी म.सा., मरुधरकेशरी मिश्रीमल जी म.सा. की परम्परा, कोटा सम्प्रदाय के खद्दरधारी गणेशलाल जी म.सा. की परम्परा, पूज्य श्री हुक्मीचन्द जी म.सा. की परम्परा, गुजराती दरियापुरी सम्प्रदाय इत्यादि परम्पराओं के श्रावकों द्वारा बिना श्रमण सूत्र का प्रतिक्रमण किया जाता रहा है। ऐसी स्थिति में परम्परा सत्य को प्रमाणित कैसे कर पाएगी?अतः आगमों का प्रबल आधार सन्मुख रखते हुए श्रावक प्रतिक्रमण में श्रावक सूत्र का ही उच्चारण किया जाना चाहिए, श्रमण सूत्र का नहीं।

(श्रमणोपासक, २० जुलाई, ५ अगस्त, २० अगस्त एवं ५ सितम्बर के अंकों से साभार)

-महामंत्री, श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org